

श्री मन्मोहन यशस्मारक ग्रंथमाला. प्रथांक-२२

भद्रोपाध्याय श्रीमन्मथसोमल गणिवर रचित

प्रश्नोत्तर चत्वारिंशत् शतक

याने आ. जभूसुरि संपादित
(तथा अरतर लेद प्रत्युत्तर)

सपादक —

परममुविदित अरतरगन्धविभूषण श्रीमोहनलालल म. ना
प्रशिष्यगल म्म० अनुयोगायाय श्रीकेशरभुनिल गणिवर शिष्य
भुद्धिसागर गणिवर

प्रकाशक —

याष्टातीर्थोद्धारदि अनेकविध शासनप्रसावकायाय श्रीजिनद्धिं सुरिल
म० ना विनीत शिष्यगल श्रीगुलाषभुनिल म. ना उपेक्षे दारा
मप्राप्त अनेक महगृहस्थोनी द्रव्यमहायथी
भुमर्ध-पाषधुनी महावीर स्वामी जैन मन्दिर ट्रस्ट कडना

भेनेल ग द्रुष्टी

जेह अवेरलार्ध डेसरीलार्ध अवेरी

श्री म वत्
२५८२

डिम्भत
५-०-०

विक्रम स वत्
२०१२

દ્રવ્યસહાયકોના શુભ નામ

૩૧. ૧૦૦૧) શેઠ રાઘવજી માધવજી અને ખીજગો. કચ્છભુજ
હ. હર્ષદરાય એન્ડ બ્રધર્સ મુંબઈ.
- ,, ૨૦૧) ,, કેશવલાલ દલપતભાઈ ઝવેરી, ખંભાત
હ. શ્રીસુંદરલાલભાઈ ઝવેરી.
- ,, ૧૫૧) ,, પૂનમચંદજી ગુલાબચંદજી, ફ્લોદી (મારવાડ)
- ,, ૧૫૧) ,, માનમલજી ઉત્તમચંદજી, હાપુડ (યૂ.પી.)
- ,, ૧૦૧) લાલા કપુરચંદજી શ્રીમાલ, દખણ હૈદરાબાદ
- ,, ૧૦૧) શેઠ અશ્વિનકુમાર અચરતલાલ શાહ, રાધનપુર (ગ.)
- ,, ૧૦૧) ,, મણિલાલ ચતરભુજ ગાંધી, ભાવનગર (હા.મુલુંડ)
- ,, ૫૧) ,, હીરાભાઈ રાયચંદ ભણુસાલી, પાલણપુર (ગ.)
- ,, ૫૧) ,, વેણીલાલભાઈ હકમચંદ, ખંભાત
હ. સુંદરલાલભાઈ ઝવેરી.
- ,, ૫૧) ,, દામોદર ખાખરા, પોરબંદર
હ. અમૃતબેન, મુલુંડ
- ,, ૫૧) ,, હંસાબેન તે રતનસી નરસી-કચ્છ લાયજી
- ,, ૨૫) ,, હંસરાજજી જસરાજજી મહેતા, સાંડેરાવ (મારવાડ)
- ,, ૨૫) ,, લૂણીયા બ્રધર્સ, હ. ભભુતમલજી લૂણીયા,
ચાંચોડી (મારવાડ)
- ,, ૨૫) ,, રૂપરાજજી માંગીલાલજી મતા, નાડોલ (મારવાડ)
- ,, ૧૫) ,, મોરારજી લાલજી, કચ્છ મુંદ્રા.
- ,, ૧૧) ,, સાગરમલજી અચલાજી, ખીમેલ (મારવાડ)

प्रस्तावना

वि स २००७ में श्रीविजयप्रेममूरिके शिष्य श्रीजगन्मूरिने मत्तरहर्षा सशेके दो बोलसग्रहोंका मूल और उमका गुजराती अनुवाद प्रकाशित करवाया, प्रथम बोलसग्रहमें १०१ व द्मरेमें १६१ बोल हैं, दोनोंमें प्राय वेही बातें हैं दोनों बोलसग्रहोंकी भाषा अशिष्ट और द्वेषमूलक है।

अपने आचारका-समाचारीका समर्थन करना एक बात है परंतु येनकेन प्रकारेण उमका औचित्य सिद्ध करना व द्मरोंके निदान्तोंका सटन करना भी किसी हृद तक जम्य हो सकता है किंतु द्मरोंके लिये यह लिखना कि 'सरतर जुठा छे, शस्त्रगहित छे, निहृय माहि छे, मूत्र उलंघे छे, यह जगलीपन नहीं तो और क्या है ? दोनों ही बोलसग्रहके लेखकोंने अपना नाम नहीं दिया है, लेखक लिखता है कि-"अत तो एना बोल काई दीठा, कोई माभल्या पनि लट्या छे कोई बोल अधिमा ओछा पणि लिट्या होय तं प श्री मेरुविजय गणि आगे वांचियो" इम लेखसे स्पष्ट है कि लेखक कोई अविकारी विद्वान नहीं या ऐसे अनधिकारी गुमनाम लेखककी पुस्तक प्रकाशित करके तथा अपनी द्वेषपूर्ण टिप्पणियां लिखकर जगन्मूरिने अपनी आगमग्रन्थताका खोवलापन ही सिद्ध किया है।

प्रस्तावनामें लेखकने भी अपनी जिम्मेदारी नहीं ममकी और असम्य शब्दोंका प्रयोग करके इम पुस्तकको पूर्णतया द्वेषमय बना दिया है।

जैन उनिहायका एक सामान्य अभ्यासी भी यह भलीभांति जानता है कि अन्य लोगोंको जैन बनाकर जैन धर्मकी जितनी सेवा सरतर गच्छीय आचार्योंनेकी है उतनी किसी भी गच्छके आचार्योंने नहीं की, इमही लिये म्यान २ पर लोगोंने उन महापुरुषोंके चरणों की प्रतिष्ठा कराके 'दादावादीयें' बनवाई हैं, तीर्थाधिराज शशुजय पर 'विमलवर्गि'में भी उनकी चररा बनना यगोगान कर रहे हैं।

महान इतिहास केना श्री जिन विजयजी जन्मके हैं × कि 'जैन-
 म्बर जैन मय जिन स्वयंमें आज विद्यमान है, उस स्वयंके
 निर्माणमें सरस्वत गच्छके आचार्य, यति और भानु-मय्य का बहुत
 बड़ा हिससा है। पृ. नपागच्छको दोहर द्बारा और दोह गच्छ
 उनके गौरवकी बराबरी नहीं कर सकता। दई धारोंमें तपागच्छ
 से भी इस गच्छका प्रधान विशेष गौरवान्वित है। भारतके प्राचीन
 गौरवको अधुण्ड रगनेवाली राजपुतानेकी वीर भूमिका पिछले एक
 हजार वर्षका इतिहास आमवाल जातिके शौर्य, बीदाव, गुण-दान
 और वाणिज्य-व्यवसाय-कौशल प्रादि का दृ गणोंमें प्रथम है और
 उन गुणोंका जो विकास इन जातिमें इस प्रकार हुआ है, वह
 मुख्यतया सरस्वतगच्छके प्रभावान्वित गुण सुखोंके सदुपदेश तथा
 शुभाशिर्वादका फल है। इनलिये सरस्वतगच्छका उच्चतम इतिहास
 यह केवल जैनमंधके इतिहासका ही एक महत्त्वपूर्ण प्रकरण नहीं
 है, बल्कि समग्र राजपुताने के इतिहासका एक विशिष्ट प्रकरण है।"

ऐसे महाप्रभाविक आचार्योंको भूठा और निन्दव, कहना
 बुद्धिका दीवालियापन व जंगलीपन नहीं तो और क्या है ?

तपागच्छनायक श्रीविजयदानसूग्जिने धर्मनगर उपाध्यायको
 इसही लिए गच्छ बाहर किया था कि उसने अन्य गच्छीनोंको निन्दव
 कहा था, श्रीहीरविजयनृर्जिने जो बारह बोल निकाले थे + उनमें
 आठवां बोल यह है कि 'शास्त्रों में सात ही निन्दव कहे हैं उनके
 अतिरिक्त जो अन्य गच्छीयों को निन्दव कहे उसमें समकित नहीं रहता।'

इससे सिद्ध है इन बोलसंग्रहोंके लेखक अनुवादक व प्रस्तावक
 यह तीनों ही समकित रहित व गुरद्वोही हैं। लोकमत प्रायः चंचल
 होता है, लोग प्रवाहमें आ जाते हैं इसलिए इन बोलोंका उत्तर
 छपना आवश्यक समझा गया, इन बोलोंकी सारी सत्य हकीकत शुद्ध

× खरतर गच्छ पद्यावली संग्रह पृ० ग

+ जैन ऐतिहासिक रास संग्रह भाग ४ पृ० १४

हृदय सरल चित्त श्रीजयसोम उपाध्यायजी ने अपने ग्रन्थकी आदि में ही दे दी है। उत्तर देनेका आशयभी कितना शुद्ध है, पाठक! उनका भी नमूना देखिए 'हमारी मति विपक्षियोंकी समाचारी दूषित करनेकी नहीं है किन्तु उनके लगाये हुए दूषणोंको विच्छेद करने की है' अर्थात् आक्रमण करनेका भाव नहा है, अपनी रक्षाका प्रयत्न मात्र है, यही वीरता और शांतिप्रियता है, प्रत्येक उत्तरमें उनकी अगाध विद्वत्ता प्रकट होती है। तपोमूर्ति श्रीबुद्धिमुनिजीने भी लेख के पदचिन्होंका अनुमरण करके अनुवादका कर्तव्य पालन किया है।

इस समय श्वेताम्बर मूर्ति पूजक सघमें मुख्यतया दो ही गच्छोंके अनुयायी हैं, इन दोनोंकी कृष्णमें सघकी हानि व सहिष्णुतामें जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक सघकी उन्नति निहित है, समाजको चाहिये कि ऐसे उदात्तही गन्धवादी साधुओंके प्रभावमें आकर अपने द्रव्य व शक्तिका दुरुपयोग न करें, ऐसे लोगोका जमाना लद चुका है तो भी जैन प्रजा इनके प्रप्रचमें फँसहीजाती है।

धर्म वीतरागतामें है, रागद्वेषके त्यागमें हैं, जो मनुष्य हमें रागद्वेषसे विमुक्त करे वही पूज्य है, जो रागद्वेषकी ओर अग्रसर करे वह आदरणीय नहीं हो सकता, कसोटी पर कस कर जैन प्रजा को आचार्य उपाध्याय साधु व पुस्तकोंकी परिक्षा करनी चाहिये। गन्ध रागमें धर्म नहा है गन्ध सहिष्णुतामें ही धर्म हैं।

आजकलका मानस विविधतामें एकता, मेद भावमें समन्वय गोजता है, जैन कवियोंमें भानन्दधमजी महाराजकी कविता पर लोग हम ही लिए मुग्ध हैं कि वे अनेकतामें एकताकी भाँजी करते ह। उम महापुरुषने क्या ही उदात्त भाव प्रदर्शित किये हैं।

पड दर्शन जिन अग भणीजे, न्यास पडग जे साथे रे ।
नमि जिनवरना चरण उपासक, पड दर्शन आराधे रे ॥

अर्थात् भगवान नमिनाथका चरण उपासक एक जैन व्यक्ति केवल जैन दर्शन ही क्या ? मार्क्य वेदान्त बौद्ध आदि छुओं दर्शनों

सबसे पुरानी व सबसे श्रेष्ठ हैं, अन्य सब स्नात्र पूजायें उसकी नकल मात्र हैं, जो फरक हीरे व काचमें होता है वही उनमें है ।

एक बात और ध्यान देने योग्य है— यद्यपि खरतरगच्छियोंकी भी अनेक शाखाये हैं पर समाचारी सबकी एकसी है, इससे सिद्ध होता है कि इनका कुछ मूल आधार है, किन्तु तपागच्छके आचार्यों की समाचारी भिन्न है इस लिए “अपनी२ डफली और अपनी२ राग” वाली कहावत यहाँ पूर्णतया चरितार्थ होती है ।

(५) प्रथम बोल संग्रह बोल १३६ में कहा है कि ‘अभयदेव सूरि के गुरु श्रीजिनेश्वरसूरिको जो श्रीदुर्लभराज ने ‘खरतर’ विरुद्ध दिया होता तो अभयदेवसूरि नवाग टीकामें इसका वर्णन अवश्य करते, उन्हें जानना चाहिए कोई भी शिष्ट पुरुष अपने मुखने अपनी (व अपने गुरु आदिकी भी) प्रशंसा नहीं करता । दूसरे अभयदेवसूरिने अपनी आगमो की टीकाका लेखन संशोधन चैत्यवासी आचार्य श्रीद्रणाचार्यसे कराया था, यदि वे उसमें खरतर विरुद्धका उल्लेख करते तो आगमोकी टीकाके लेखन व प्रचारमें चैत्यवासी आचार्योंका जो सहयोग प्राप्त हुआ था वह न होता ।

वे अपना उत्तराधिकारी किसी अत्यन्त शक्तिशाली विद्वान शिष्य को बनाना चाहते थे, उनके श्रौपसंपदिक शिष्य जिनवल्लभ गण्णिमें ये सब गुण थे, किन्तु वे प्रथम चैत्यवासी आचार्यके शिष्य थे, इनसे तो उन्होंने ने सिद्धान्त वांचना व उपसंपदा पाई थी । उस समय चैत्यवासीयोका बहुत जोर था, सुविहित मुनिओ नाम मात्रके रहे थे अधिकांश मठाधिपती बने हुए थे । इससे कहीं चैत्यवासियोंको अपने प्रचारका मोका न मिल जाए ! श्रीअभयदेव सूरिजीने अपने अत्यन्त विश्वस्त शिष्य प्रसन्नचन्द्रसूरिसे कहा कि- जब लोगो पर जिन वल्लभ गणिका प्रभाव प्रगट हो जावे, जन समुदाय इसके महत्वको जान ले, तो इस को गच्छ नायक बनाना अभी तो वर्धमान सूरिजी को ही मेरा उत्तराधिकारी जानना ।

प्रमन्नचन्द्रमूर्तिने यह भार अपने सुयोग्य शिष्य देवभद्राचार्य पर छोड़ा और स्वर्ग सिंघारे । उम समय देवभद्राचार्य इम समुदाय में बहुत प्रभावशाली आचार्य थे उन्होंने वीर चरित् पार्श्वनाथ चरित् आदि कई ग्रन्थ बनाये थे ।

उपर जिनवल्लभ गणिने पिंडविशुद्धि सघपट्टक आदि अनेक ग्रन्थ बनाये । वागड देशमें दम हजार नूतन जैन बनाये, उनकी महानता सब पर प्रगट हो गई, समुदाय उनका पूर्ण भक्त हो गया तब देवभद्राचार्यने ११६७ में गच्छका नेतृत्व उनके हाथ सौंप कर दादा गुरु श्रीअभयदेवसूरिके आदेशका पालन किया । जिनवल्लभसूरिके स्वर्गरोहण पश्चात् इन्हीं देवभद्राचार्यने जिनदत्तासूरिको गच्छनायक बनाया ।

११६७ से १०११ तक युगप्रधान जिनदत्तासूरिजीका शासन काल था । 'खरतर' विरुद्धसे चैत्यवासियोंकी पराजयका संकेत मिलता है । दूसरेका दिल दुखाना उचित न जानकर इन महापुरुषों ने स्वयं इसका प्रयोग नहीं किया किन्तु जब भक्तिवश अन्य लोग विरुद्धका प्रयोग करने लगे तो फिर इस विरुद्धका प्रयोग होने लगा ।

श्रीअभयदेवसूरिजीको खरतरगच्छसे पृथक रखनेका विचार सबसे पहले तपागच्छी धर्मसागर उपाध्यायके दिमागमें आया । श्रीअभय देवसूरिने नवभाग सूत्रोंपर टीकाकी थी, इसलिये इनका खरतरगच्छमें होना धर्मसागरको बहुत अखरता था । खोजनेपर उसको इसका कूट उपाय भी मिल गया, क्योंकि खरतरगच्छ पञ्चवली—गणधर सार्द्धशतकृत्तिमें जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है अभयदेवसूरिने वर्धमानसूरिको अपना उत्तराधिकारी नियत किया था । इस प्रयकी इस बातको तो ये लोग मान लेते हैं किन्तु प्रमन्नचन्द्रसूरिको जो आदेश दिया गया था उसे नहीं मानते † इसे ही द्वेष बुद्धि कहते हैं । क्या एक आचार्य के २ पट्टवर नहा हो सकते ? क्या जगच्चन्द्रसूरिजीके दो पट्टधर

† तपा खरतर भेद पृ० १७३ ।

नहीं हुए? श्रीअभयदेवमूर्तिके चरण गुरुवंशु श्रीजिनचन्द्रमूर्तिके श्रवणी बनाई सवेगरेगशालाका संशोधन श्रीअभयदेवमूर्ति गिरि जिनवल्गम गणसे कराया था, इनका स्पष्ट उद्देश्य उन्होंने दिया है निम्नलिखित प्रकरण में जिनवल्गम गण ने (१) प्रमद्वन्द्वमूर्ति (२) वर्धमानमूर्ति (३) हरिभद्रमूर्ति और (४) देवभद्रमूर्तिकी स्तुतिकी है ।

इससे स्पष्ट है अपने गुरुवंशु वर्धमानमूर्तिके प्रति भी उन्हें वही आदर था और श्रीजिनचन्द्रमूर्तिजीने उन्हें अभयदेवमूर्तिजी का शिष्य माना है ।

इन सब बातोंने गहराई स्पष्ट है जिनवल्गममूर्ति इसी परंपरा में थे, उनके सब ग्रन्थोंमें उन्होंने श्रीअभयदेवमूर्तीको अपना गुरु माना है ।

श्रीअभयदेवमूर्तिके पाट पर तो २ आचार्य थे इनका चित्रान्देषीयोको कुछ कहनेका अवसर मिल गया किन्तु जिनवल्गममूर्तिके पाट पर तो एकमात्र युगप्रधान जिनवल्गममूर्तिजी थे, ऐसी अवस्थामें जिनवल्गम(सर्गि)गणको इस परंपरामें न मानना गिना उचितानके अज्ञानके क्या हो सकता है । ×

श्रीजगच्चन्द्रमूर्तिको उदयपुर दरवारने 'तपा' विहद दीया इसका उल्लेख केवल तपागच्छीय पट्टवलियोंमें है, फिर भी हम तो इनपे आक्षेप नहीं करते, फिर श्रीजिनेधरमूर्तिको गुर्जरनरेश श्रीदुर्लराजने 'खरतर' विहद दीया इससे चिह्न क्यों है ? वीर वंशावली आदि अनेक स्थलों पर तपागच्छीय लोगोंने भी इस चीजको माना है पर द्वेषबुद्धि मनुष्य को अंग बना देती है । इसीसे उन्हें सत्यके दर्शन नहीं होते ।

मृत्युसप्तमी सं० २०१२]

[उमरावचन्द्र जरगड]

ग्रंथकारे, ते टिप्पणकारे आपेल प्रमाण ग्रंथानुं
अकारादि अनुक्रम

	पाना		पाना
१	अनुयोगद्वार सूत्र १६६	१५	आचारविधि सामा० प्र. ४६,
२	अनुयोगद्वार टीका १६७		५१, २४०, १८, २०, १३६,
३	आवश्यक भूग (ताडप प्र) ६७		२४५, २८१, ३०४, ३४४
४	आवश्यक भू. वृ. १, १५, ३०, ५३, ७३, १०६, ३६०, (११, २६)	१६	धरियावदि कृतीमी ५४
५	आवश्यक लघुवृत्ति ५६	१७	उवनाथ सूत्र ६
६	आवश्यक टिप्पणक १५, १०२	१८	उवनाथ टीका ३४२
७	आवश्यक व्युत्पि ५३, ७३, ६२, ११८, १३८, २०४ ३५६, ६३, ८४, १४२	१९	उत्तगध्यपन सूत्र २२, २०५, २७६
८	आव० ज्ञाना० (मोमसुद्ध शुद्धि) ६३	२०	उत्तगध्यपन वृत्ति २३
९	आव० सितगी टी ३४८	२१	" " भू. वृ. २०५, ३३३, ३११
१०	आचारानुनिर्णयिनी २६३	२२	उत्तगध्यपन सर्वार्थि २७६
११	आचारानु नीम १५८, २६४, ३४४	२३	ओवनियुक्ति टी ५०, ६१, ३४६
१२	आचारानु ज्ञाना० २५६	२४	क पनियुक्ति २५६
१३	आचारानु दिनक ५६, ८३, ३२५	२५	कल्पव्युत्पि २६४
१४	आचारानु प्रीपप, १३, २४०	२६	कल्पवृत्ति (स देव वि) २५४
		२७	कल्पटिप्पण २५६
		२८	कल्पनिर्णय २५६
		२९	कल्पानुनिय (तप, जप, यज्ञ शुद्धि) २५७
		३०	कल्पनीम (प्रगीन) २५९

	पाना		पाना
३१	कल्पसूत्रांतर्वाच्य २५७	४६	जिनवद्वलभ स प्रति. सामा. ३३, ६३
३२	कल्प लघुटीका (आं. उदय सागर) २५८	४७	ज्योतिषकरं उड टी. ७८, १८८
३३	कल्प भू. टीका (आं. भाषि- कपि सि.) २५८	४८	शाशांग सूत्र टीका ५, १५८
३४	कल्प आलावभोध (कमला गच्छीय) २५८	४९	शाशा प्रकरण ३७, ५७
३५	कल्पदीपिका (न. ज्यविज- योपा०) २६२	५०	तन्वार्थं भाष्य वृत्ति ६
३६	कल्पकिरणवली २१, २५५	५१	तन्वतरंगिणी वृत्ति ४०७
३७	कल्पसुभोधिका तेनुं टि. २१, २५४	५२	तित्थोच्चासिय पयन्तो २७
३८	कथाकाश (जितेश्वर सुरि) ३४३	५३	विजय पंडुत्त स्तोत्र ३३९
३९	कल्याणक स्तोत्र ३६५	५४	दशवैकालिक ति. टी. १८८
४०	गुप्ततत्त्व प्रदीप २१, २५५	५५	द्वादशकुलक टी. ५६
४१	गुर्वावली-त्रिदशतरंगिणी १६६, ३८३, ३९५, ४०७	५६	नवपद प्र. भू. वृ. ६, ५५, २०३, २०५
४२	जैत्यवंदनादि. भा. वृ. ८३	५७	„ „ लघुवृ. ५५, २०३
४३	जैत्यवंदन भा. अय्यूर्णु (ज्ञान सा. सू.) २६	५८	नवतन्वसंवेदन प्र. टी. ५६
४४	जंभुदीव पत्रति टी. २५३, ३५०	५९	निशीथभाष्य ९२
४५	जंभुदीव-व्यं-सूरपत्रति ७८	६०	निशीथयूर्णु ७९, १७४, १७९, १८८
		६१	निर्वाणु कलिका २४०
		६२	पर्युपणा कल्पसुत्र ६, १७७, २१०, २६२, ३०७
		६३	पञ्चभूषणु भाष्य ८५, २८६

	पाना		पाना
२४	पट्टावली (धर्मभाग) १८६	८०	मृहत्स त्रयशुी (जिनभद्रीय)
२५	पयाशक प्रकरण २६४, २६६		२६६
६६	पयाशक टीका ३०, ५३, ३३५ ३५४	८१	मृहत्स शातिम्तन ३३८
६७	पयानक यूर्णि ५३, ११३ ११८, २१६, २६, ८७, १५१, २४४, २६८, २८६, ३०१	८२	भगवतीसूत्र ३११, ३३३
६८	पयवस्तुके टीका ३२, ७३,	८३	भगवतीसूत्र टीका ३३१-३२, ३४२
६९	पि अनियुक्ति टी ६२	८४	महानिशीयसूत्र ५८, १४८, २४३
६०	पुण्यसाग ज्या प्रशस्ति १८५	८५	महानीग पयक पूजा (वल्सलसुरि) २६५
७१	प्रतिक्रमणु हेतुगर्भ २१४, २७२, ३०२, ३१५	८६	यतिदिनचर्या ३१३, ३४६
७२	प्रतिक्रमणसूत्र टी (श्रीयद्रसुति) १८	८७	यनिदिनचर्या टीका ३१३, ३४६
७३	प्रतिष्ठाकल्प (विभा) २४०	८८	योगविधि प्रकरण (प्राचीन) १३
७४	प्रतिष्ठाविधि (समुद्र) २४०	८९	योगशास्त्र भूण १०१
७५	प्रवचन सारोद्धार भूष १२६, ८४, ८६, २४४	९०	योगशा आलाव १०१
७६	प्रवचन सारोद्धार टी ६२, १२६, ३२१, ३४५	९१	योगशास्त्र टीका ३४, ५६
७७	पृहत्कल्पयूर्णि १८७	९२	ललित विगतग ३३५
७८	पृहत्कल्पभाष्य ६३	९३	लघु शत्रु न्य महात्म्य २४०
७९	पृहत्कल्पविशेष भा ८३	९४	लघु शातिम्तन ३३८
		९५	पसुहेवहि डी २२८
		९६	वधमान विद्याकल्प २५८
		९७	वद्वश्रुति ४१६
		९८	वदनक भाष्य २७३

पाना	पान
६६ विशेषावश्यक ला. वृ. ३५४	११४ समवायांग सूत्र ७८
१०० विधिप्रपा २८, ५६, ७३	११५ समवायांग सूत्र टीका २६०
१०१ विचारमृत संग्रह ५४	११६ सञ्चिताञ्चित वस्तुकात्रमानसं ३४५
१०२ व्यवहार लाभ्य टी. ५०, २२८, २५०	११७ सम्यक्त्वशब्दयोर्ध्वार १८०
१०३ पञ्चावश्यक आणावभोध (तश्च प्रल सू.) ४७	११८ संभोध प्रकरण २६६
१०४ पञ्चावश्यक आणा (तथा-हेमहंसगणित्ति) १३६, १४०, २१७, ३ ३५	१२१ संध्याचार लाभ्य १४०
१०५ षष्टि शतक भूषण १६०	१२० सामाग्यारी (तिलकाचार्य) ५६
१०६ ,, ,, भू. आ.	१२१ साधुद्विन चर्या (उच्छेदग) ७३
१०७ शत्रुंजय महात्म्य २४०, २६८	१२२ साधुद्विनकृत्य २४६
१०८ श्रावक प्रसूति वृत्ति ५, ५६	१२३ सीमंधरनिन स्तवन १६१
१०९ श्राध्वप्रति. वृ. अर्थदी. १०, ३५६	१२४ सुलसायश्चित्र २५२
११० श्राध्वप्रति कल्प भू. टी. ४६	१२५ सुभोधा सामाग्यारी १८, १११, २४५
१११ श्राध्व प्रति० यूर्ति ५६, २०४, ३६०	१२६ सुयगांग सूत्र ५
११२ श्राध्वविधि ३१५, ३४३	१२७ सेन प्रश्न १२, १७, ३५, ५६, ६२, ११२, १६३, १७१, १७२, १८०, १८६, १८९, ३०८, ३०९, ३४५
११३ श्राध्वविधि विनिश्चय १३६, २१६	१२८ छीर प्रश्न ६८, २२४
	१२९ ज्ञाताधर्म कथांग सूत्र १८४
	१३० ज्ञाताधर्म कथांग टीका ३०६-७, ३४२

अथकारे, ने टिप्पणुकारे आपेल प्रभाणु ग्रंथानु अकारादि अनुक्रम

	पाना		पाना	
१	अनुयोगद्वाग् सूत्र	१६६	१५	आयागविधि आभा० प्र ४६,
२	अनुयोगद्वाग् टीका	१६७		५१, २४०, १८, २०, १३६,
३	आवश्यक भूग (ताडप प्र)	८७		२४५, २८१, ३२४, ३४४
४	आवश्यक भू वृ ६, १५, ३२, ५३, ७३, १०६, ३६०, (११, २६)		१६	धर्ग्यावदि छत्रीमी
५	आवश्यक लघुवृत्ति	५६	१७	डिवराध सूत्र
६	आवश्यक टिप्पणऽ १५, १०२		१८	डिववाध टीका
७	आवश्यक व्युत्पि ५३, ७३, ६३, ११८, १३८, २०४ ३५६, ३३, ८४, १४२		१९	डितगध्ययन सूत्र
८	आव० आला० (सोमसु ६२ सूरि)	६३		२०५, २७६
९	आव० सितरी टी	३४८	२०	डितगध्ययन वृत्ति
१०	आयागगनियुक्ति	२६३	२१	" " भू वृ
११	आयागग टीका २६४, ३४४			२०५, ३३३, ३११
१२	आयागग आला०	२५६	२२	डितराध्ययन सर्वार्थिसि
१३	आयाग दिनकऽ ८३, ३२५		२३	ओवनियुक्ति टी
१४	आयाग प्रदीप ५६, १३, २४२			६१, ३४६
			२४	कल्पनियुक्ति
			२५	कल्पव्युत्पि
			२६	कल्पवृत्ति (म देह वि)
			२७	कल्पटिप्पण
			२८	कल्पनिश्कत
			२९	कल्पातर्वाभ्य (तपाज्ययद्र सूरि)
			३०	कल्पटीका (प्राचीन)

पाना	पान
६६ विशेषावश्यक ला. वृ. ३५४	११४ समवायांग सूत्र ७८
१०० विधिप्रपा २८, ५६, ७३	११५ समवायांग सूत्र टीका २६०
१०१ विचारमृत संग्रह ५४	११६ सयित्तायित्त वस्तुकालमानस० ३४५
१०२ व्यवहार लाष्य टी. ५०, २२८, २५०	११७ सम्यकत्वशक्त्योर्ध्वार १८०
१०३ पञ्चवश्यक आणावभोध (तत्रणु प्रल स्र.) ४७	११८ संभोध प्रकरण २६६
१०४ पञ्चवश्यक आणा (तपा-हेमहंसगणि) १३६, १४०, २१७, ३ ३५	१२१ संधायार लाष्य १४०
१०५ षष्टि शतक मूण १६०	१२० सामायारी (तिलकाचार्य) ५६
१०६ ,, ,, मू. आ.	१२१ साधुदिन र्यर्था (उक्केशग) ७३
१०७ शत्रुंजय महात्म्य २४०, २६८	१२२ साधुदिनकृत्य २४६
१०८ श्रावक प्रज्ञप्ति वृत्ति प, ५६	१२३ सीमंधरनिन स्तवन १६१
१०९ श्राध्वप्रति. वृ. अर्थदी. १०, ३५६	१२४ सुलसायरित्र २५२
११० श्राध्वलत कल्प मू. टी. ४६	१२५ सुभोधा सामायारी १८, १११, २४५
१११ श्राध्व प्रति० श्रुति ५६, २०४, ३६०	१२६ सुयगजंग सूत्र ५
११२ श्राध्वविधि ३१५, ३४३	१२७ सेन प्रश्न १२, १७, ३५, ५६, ६२, ११२, १६३, १७१, १७२, १८०, १८६, १९१, ३०८, ३०९, ३४५
११३ श्राध्वविधि विनिश्चय १८६, २१६	१२८ छीर प्रश्न ६८, २२४
	१२९ ज्ञाताधर्म इथांग सूत्र १८४
	१३० ज्ञाताधर्म इथांग टीका ३०६-७, ३४२

॥ ॐ अहं नमः ॥



नमोन्युण अविमंवाइणो समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

नमोनम परमगुर श्रीमदभयदेव-जिनदत्त-कुशल-
मोहन-यशो-ऋद्धि-केशर पादपद्मेभ्य ।

श्रीमन्मोहन-यशः स्मारक ग्रन्थालायां

वाटिकन्दकुदाल-सकलसूरिशेखर-युगप्रधानाचार्यप्रवर-श्रीमज्जिनचन्द्र-

सूरि नाम्राज्यवर्त्ती वाचनाचार्य श्रीमत्प्रमोदमणिक्यगणपुगव-

विनेयावतस श्रीमदकञ्चरसुलतानससहजय महोपाध्याय

श्रीमज्जयसोम गणिवर विनिर्मित रामधु जयूतपादित

‘तपाखरतरभेद’ प्रत्युत्तररूप—

प्रश्नोत्तर चत्वारिंशत् शतक

श्रीजामेयममेय-प्रमेयपरिकलनकलितमतिविभव ।

करणत्रययुतघन्दन-करणेनानम्य रम्यतम ॥ १ ॥

श्रीमज्जिनदत्तगुरु-श्रीजिनकुशलमूर्तिगुरुराजी ।

विम्व्यूहविघात, कुरुतां मत्प्रीतिमाधाय ॥ २ ॥ ॐ

* ७पा० श्रीभुभभाग्नी प्रतिभा २-३ ने ४ थे। २३३ नथी

गुरवोऽपि दयातिलकाः, प्रमोदमाणिक्यवाचनागुरवः ।
 विदधतु बोधविकाशं, विख्याताः क्षेमशाखायां ॥ ३ ॥
 श्रुतदेवते ! प्रसादं, विधाय मयि बोधवृद्धिमाधाय ।
 अस्खलितशुक्तिविभवं, वितनु तनुकृत्य परपक्षं ॥ ४ ॥
 विदधति प्रश्नपदाना-मुत्तरवाक्यानि समग्रमयमत्या ।
 युगवरजिनचन्द्राणां, वाक्याञ्जयसोमनामानः ॥ ५ ॥
 अस्माकमसाम्भोगिक-सामाचारिषु दूषणे न मतिः ।
 तद्वत्तदूषणानां, विच्छेदाय प्रवृत्तिरियं ॥ ६ ॥
 वार्ताविहितवाक्यानां, समाधानाय केवलं ।
 वार्ताभिरेव तत्तेषा-मुत्तरं दातुमुद्यमः ॥ ७ ॥

भाषाः—अपरिमित पदार्थानां ज्ञानयुक्त भतिविलसवणा श्रीपार्श्व-
 प्रभुने मन वयन अने ज्ञायथी वंदन करवा पूर्वक सारी रीते नभस्कार
 करीने (प्रश्नपदोना उत्तर लभीये छीये) ॥१॥ श्रीमन्निज्जनदत्तसरि
 अने श्रीनिज्जकुशलसूरि आ णने गुर्देवेो उत्तम प्रसन्नता करीने विघ्न-
 समूहनेो नाश करनारा थायेो ॥२॥ क्षेमधाउ शाभामां विख्यात येवा
 गुर्भहारण द्यातिलक (गण्डि) तथा प्रमोदमाणिक्य वाचना गुर्.
 आ णने गुर्येो पणु षोधनेो विज्ञास करनारा थायेो ॥ ३ ॥
 हे श्रुतदेवते ! (तमे) प्रसन्नता पूर्वक भ्रारामां षोध (सम्यग्ज्ञान) नी वृद्धि
 करी परपक्षने अल्प करीने अस्खलित युक्तिविलसने विस्तारे ॥४॥
 (आपी रीते नभस्कारादि करीने) युगप्रधान आचार्य श्रीनिज्जन-
 सूरिणना आदेशथी जयसोम नामना पाहक समयानुसारिणी भतिये
 प्रश्नपदोना उत्तर वाउये रये छे ॥ ५ ॥ अमारी भति विपक्षियोनी

नाभायाग्निने इषित इवानी नही, पशु तेरे आपेल इपणोने
 पिच्छेड इवने आ प्रवृत्ति छे ॥ ६ ॥ लापाभा लपेल वाध्योना
 समाधान भाटे लापाथी तेओने उतर देवने उद्यम छे ॥ ७ ॥

श्रीअहम्मदावादमाहे श्रीजेमलमेरु वास्तव्य बहरा गोत्रीय
 माह सुजइ सत्रत् १६२६ वर्षे ज्येष्ठसुदि ५ दिने अम्हारा गुरु
 वाचनाचार्य श्रीप्रमोदमाणिक्य गण्णिने श्रीमुखि अम्हज समीपि
 चर्चा करी १६ श्रावका साथ ममकी श्रीजिनप्रतिमा महामहो-
 च्छवपूर्वक जुहारी । पछइ बली ४८ बोल श्रीखरतरगच्छ सामा
 चारीना सर्वं गच्छना गीताथं यतियानइ मिद्वानतइ न्यायें
 पूछी तथा चर्चा करी अषि मेघजी प्रमुख २८ लुका यतिया
 साथि श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी सर्वं शास्त्रसमत जाणी
 आदरता थका लुका ऋषि मेघजीनइ पोयानइ मामलइ
 [ऋगडै] लुका श्रावका ३५ साथि पोयाना ऋगडा करिवानइ
 निमित्ति तपेड ऋगडाना बोल कवृल कीयइ थकड श्रीखरतर
 रुघनायक मत्यवादी धीमारगधर मुहुंतइ निपेधता लुका अषि
 मेघजी २८ ठाणइ तपामाहि गया । पछइ १६ श्रावका साथि
 श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी बहरइ सूजइ आदरी । हिवे
 तेह बहरा मा० मूजाना पुत्र मा० राजमी, तिणइ पुणि चरचा
 करी श्रीजिनप्रतिमा जुहातीनइ श्रीखरतरगच्छनी सामाचारी
 भावइ आदरी खरतर धया, पद्री मुलतान माहि किणएकइ मेलि
 खरतर श्रावका साथि मन अणमिलता तथा श्रावकानट आदरइ
 अणचर्चा नुणमइ (?) तपानी सामाचारी मुजतानमाहि त भइयइ

आदरी । पछी एतला वोल लिखी करी श्रीलाहोरि तपानां श्रावकां-
नइ खरतरां भणी पूछिवानइ काजि मूंक्या, लाहोरमध्ये ते वोल
किणही चर्च्या नहीं, पूछ्या नहीं, इमजि लिख्या रह्या । पछी
ते वोल आपणइ हाथि आव्या, परं ते वोल लिखितां द्वेपनइ
वाह्यइ घणा असंवद्ध वोल लिख्या छइ, ते वोल न लिखायइ ।
हिवइ श्रीजिनचन्द्रसूरि युगप्रधानजीनइ आदेशइ आचायं
श्रीजिनसिंहसूरिजीनइं कथनि आपणइ काजि उत्तरसेती ते
प्रश्नरा वोल लिखीयइ छीई ।

भाषा—श्रीजिसलमेर निवासी शा. सून्य वडोराये श्रीअमदा-
वादमां संवत् १६२६ वर्षे जेह सुद्ध प ना रोज अमारा गुड
वायनाचार्य श्रीप्रमोदभाण्डिक्य गण्डिना समझ अमारी पासे चर्चा
करीने १६ श्रावको साथे समज्जने महामहोत्सवे श्रीजिनप्रतिमा
जुडारी (वांटी), त्पार प्पाद ४८ जोद भरतरसामायारीना सर्व
गच्छना गीतार्थ यतियोने सिद्धांत न्याये पूछी अने चर्चा करी ऋपि
मेधज्ज आदि लूंकाना २८ यतियो साथे भरतर गच्छनी सामायारी
सर्व शास्त्रसंमत जण्णी आदरतां थकां लूंक ऋपि मेधज्जने पोथाने
मांभले (पुस्तकोनी प्पायत) लूंकाना उप श्रावको साथे जगडा
करवा निमित्ते तपाओये जगडाना जोल (मेधज्जनी छच्छानुदूणी मह
करवा आदि प्पायत) कयूल करतां श्रीभरतर संधनायक सत्यवादी
श्रीसारंगधर मुहुंताये निषेधवाथी ऋपि मेधज्ज २८ हाण्णु तपाभां गया,
पछी १६ श्रावको साथे भरतर गच्छनी सामायारी सून्य वडोराये
आदरी । हवे ते सून्य वडोराना पुत्र राजसी, तेणे पणु चर्चा करी

શ્રીજિનપ્રતિમા જુહારીને ખરતર ગચ્છની સામાચારી ભાવે આદરી
ખરતર થયા, ત્યાગપછી મુલતાનમાહી કોઈ ઢાગણુવશ ખરતર શ્રાવકો સાથે
મનનો મેલાપ ન ગહેવાથી અને તપાશ્રાવકો તરફના આદરથી કોઈ પણ
વાતની ચર્ચા કર્યા વગર તેણે મુલતાનમા તપાની સામાચારી આદરી
પછી એટલા (જે આગળ લખાય છે, તે) ખેલ લખીને લાહોરના
તપા શ્રાવકો ઉપર ખરતરેને પૂછવા માટે મોકલ્યા, પણ તે ખેલ લાહોરના
તપા શ્રાવકોએ કોઈએ ચર્ચ્યા નહી તેમ કોઈનેય પૂછ્યા પણ નહી,
એમના એમ લખ્યા પણ ગલા પછી તે ખેલ આપણા હાથે આવ્યા,
પરંતુ તે ખેલ લખતા દેવના ઢાગણે એવા અસખ્દ રીતે લખ્યા છે
કે જે લખાય નહી છતા હમણા યુગપ્રધાન આચાર્ય શ્રીજિનચંદ્ર
સુજિતના આદેશથી અને આચાર્ય શ્રીજિનસિંહ સુરિજના ડહેવાથી
મ્હાગ પોતાના નિમિત્તે ઉત્તર મહિન તે પ્રશ્નોના ખેલ લખીએ છીએ ।

(તપા ખરતર ભેદ ત્રય ૧-૨, ખેલ પહેલો)

૧ પ્રત્ન-તપા દિન દિન પ્રતિ પોસહ વ્રત કરઈ, સ્વરતર
મદા પોમહ ન કરઈ, પર્વતિવિહિ કરઈ તે સ્યુ ? ।

ભાષા-તપા પ્રતિદિન-દરેણ પોમહ કરે, ખરતર મદા પોસહ
ન કરે, પર્વતિવિએ કરે, તે શુ ?

તત્રાર્થ—શ્રીમિદ્ધાતમાહિ પોસહોવવાસ નામઈ ઇગ્યારમા વ્રત
શ્રાવકના કહ્યાછઈ તે પોપધોવવાસ આઠમિ ચવદિસિ પૂનમિ અમા-
વસિ કેં પર્વતિવિયે કરિવા કહ્યા, ચદુક્ત શ્રીસૂયગઢાગે (આગમોં
સ પ્ર પત્ર ૪૦૮) - “સેણ ચાહસ ડ્ટુમુદિટ્ટુપુણમાસિણીસુ

पडिपुण्यं पोसहं समं अणुपालेमाणे विहरति” तथा ‘उववाइ’
 उपांगमांहि श्रावक वर्णनाधिकारि तथा श्रीठाणांगमांहि च्यार
 विसामानइ अधिकारी विधिवादइ तथा श्रीआवश्यक वृहद्द्वृत्तिमांहि
 तथा श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्तिमांहि “पौषधोपवासातिथिसंविभागौ तु
 प्रतिनियतदिवसानुष्ठेयौ, न प्रतिदिवसाचरणीयौ” एहवे
 अक्षरे करी नियत नियत दिवसे पोसहव्रत लेवा श्रीहरिभद्रसूरिइं
 प्ररूप्या, अनइं प्रतिदिनइ पोसहव्रत लेवा निषेध्या छइ. कल्याणक
 तिथिना पोसह श्रीदशाश्रुत(स्कंध-पर्यूपणाकल्प) सिद्धांतमांहि
 “पाराभोयं पोसहोववासं पट्टविंसु” इति पाठेन, तथा “अट्टा-
 हियपञ्जुसणे” इति गाथाये पजुसणना पोसह श्रीतत्त्वार्थवृत्तिइ
 तथा ‘नवपद(प्रकरण) वृत्ति. मांहि कह्या, तथा ‘सूयगडांगवृत्ति’
 मांहि श्रीशीलांकाचार्यइं “पूर्णमासिपु” इति वृत्तिइ १८ (मा)
 अध्ययने विधिवादइं कल्याणकना पोसह प्ररूप्या छइ ।

उपधानना पोसह जे श्रावक श्राविका पासि निरंतर-पर्व पाखइं
 करावियइ छइ ते गीतार्थे आपांपणा सामाचारी ग्रंथांमांहि उपधान
 वहतां पोसह लिख्याछे, तेह भणी आचरणाना पोसह
 कहीयइ छइ, तद्यथा—“ येन प्राग्मस्कारादिसूत्राण्यधीतानि
 तेनापि यथायोगं निर्विलम्बमेवोपधानानि यथाशक्तितपसा
 पौषधग्रहणादिविधिनाऽवश्यं वहनीयानि” इति तथा (श्रीरत्न-
 शंखरसूरिकृत) श्रीआचारप्रदीपग्रंथे (१९ पत्रे) । एतावता आगमोक्त
 पोसह (व्रत) पर्वदिवसेजि करिवा, अपर्वदिवसे न करिवा ।
 तथा ऋषिमतियां तपांग गुरु श्रीदेवेन्द्रसूरिइं “ अथ पौषधलक्षणं

तृतीयं शिक्षावतमुच्यते-तत्र 'पोष' पुष्टिं प्रक्रमाद्धर्मस्य
 'धत्ते' करोतीति पौषध अष्टमीचतुर्दशीपूर्णिमाग्रमावास्यादि
 पर्वदि वमानुष्ठेयो व्रतविशेष " इति धर्मरत्नप्रकरणवृत्तौ ।
 तथा श्रावकदिनकृत्यसूत्रमाहि " छुएह तिहीण मज्झग्मि, का
 तिही ? मज्ज वासरे । किं वा कल्लाणगं ? अज्ज,
 लोगनाहाण सर्तिअ ॥१॥ 'एहवइ पाठइं करि २ आठमी २
 चवडमि १ पुनिम ? अमवासि, एव छ तिथि तथा कल्याणकतिथि
 सर्व एतली तिथि पोमह लेवानी कही-वृत्तिमाहिवखाणी छइ,
 तउ आगमोक्त एह पोसह लेवानी तिथि थकी अधिकी पोसह
 लेवानी तिथि मानइ छइ ते आगम तथा आचरणा वकी विरुद्ध
 जाणिवु, गग-द्वेषना वाह्या कहइ प्रमाण न थाइ, एतलइ
 आगमोक्त पोमह व्रत पर्वतिथेजि मदा लेवउ, पर पर्वतिथि पखइ
 न लेवन, एव शास्त्रनी हुडीना पाठ विशेषार्यीयइ पोसहछत्रीसीनी
 वृत्ति वकी जौइवा ॥ १ ॥

भाषा -मिद्धातमा 'पोमहोवनाम' नामनो जे अथागमो मत
 श्रावकनो ऽहो छे ते पौषधोपनाम, आहम, यौदस, पूनम अने
 अभास, आ पर्वतिथिअे ऽनानु कलु छे, जेम के सूर्यगणग सूत्र
 (आगमोदय समिनिअे प्रजागितना पाना ४०८) मा लभ्यु छे के
 " ते लेप नामनो श्रावक यौदस आहम तथा उद्दिष्टा तिथि अटले
 अभास अने तीर्थ करहेवानी कल्याणकतिथिअो, तथा पूनम आ षधी

પર્વતિથિઓએ સંપૂર્ણ એટલે આહારનો ત્યાગ દેશથી કે x સર્વથી

x જે વ્રતરૂપ પૌષ્ઠમાં ચાર પ્રકારના આહાર પૈકી એક દેશરૂપ માત્ર પાણીનો આહાર વાપરવાનું છૂટું હોય તેવો ત્રેવિહાર ઉપવાસ જે ક્રમય તે દેશથી આહાર પૌષ્ઠ અને જેમાં ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ રૂપ યોવિહાર ઉપવાસ હોય તે સર્વથી આહાર પૌષ્ઠ કહેવાય.

આથી વિપક્ષિઓ જે આજે એકાસણાથીય વ્રતરૂપ પૌષ્ઠ કરવાનું માને છે, તે તે પ્રમાણે યોસદ પહોરીયા પોસા એકાસણા આદિથી કરાવે છે તે શાસ્ત્રાનુસાર નહીં, પણ સ્વમતિકલ્પનાએ ઘડી કાઢેલ ધરના આચાર છે. અને પંડિત વીરવિજયજીએ પૌષ્ઠ વ્રતની પૂન્યમાં જે “ એકાસણ કહ્યું રે શ્રીસિદ્ધાંતમાં ” એમ લખ્યું છે, તે શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયની અબજાણતાએ તેમ સ્વગચ્છાચારના આગ્રહવશ લખ્યું છે, શાસ્ત્રકારોએ જે દેશથી આહાર પૌષ્ઠમાં એકાસણાને લીધું છે. તે વ્રતરૂપ ચારે પ્રકારના સંપૂર્ણ પૌષ્ઠમાં નહીં, પણ માત્ર આહારના ત્યાગરૂપ દેશપૌષ્ઠમાં લીધું છે, અને તેમાંય એકાસણાને લીધું છે. એટલું જ નહીં કિંતુ યિઆસણાને તેમ એકાદિ વિગયત્યાગને પણ શાસ્ત્રકારોએ દેશથી આહારપૌષ્ઠ કહ્યું છે, જુઓ આ ગ્રંથકારે પ્રશ્નોત્તર ખીન્નમાં આપેલ આવશ્યક બૃહદ્વૃત્તિ તથા તેના ટિપ્પણનો પાઠ.

ન્યારે શાસ્ત્રકારોએ યિઆસણા અને વિગયત્યાગ માત્રને પણ દેશથી આહાર પૌષ્ઠ કહેલ છે ત્યારે, જોકે રામપંથી આગમપ્રજ્ઞજી તથા તેમના પૂર્વ લેખકો તે ‘તપા ખરતર ભેદ’ પૃ૦ ૨ તથા ૯૬, અને ૧૨૫. બોલ ત્રીજા તથા ૧૧૪ માં, દિવસમાં ગમે તેટલી વાર જમીને પણ રાત્રે પૌષ્ઠ કરવાની સ્પષ્ટ હિમાયતી કરી રહ્યા છે.

૮ અને આનાદિ વડે ગરીબત્કાર ૨, અધ્વજ્યર્થ ૩ તથા આમાઙ્કિ વ્યાપાર આ ત્રણનો અર્થ, ત્યાગ કર્યા ૩૫ ચાગે પ્રજાગ્નો પૌષ્ઠ સારી રીતે પાલન કરતો પ્રિયગે છે ” તેમજ ઉત્તરાખ ઉપાગ મત્રમા

ગતા તેમનો ટટ્ટુ ચાલે તેમ લાગતો નથી, કારણ કે એકાત મતા- પ્રહની ગગાધતા શિવાય આ વાત (ગમે તેટલી વાગ જમાને ગત્રે પૌષ્ઠ કર્યાની) કોષનેય ગળે ઉતરે તેમ નથી, પણ આજના આગમ્પથી આદિ તપાઓ, જે એકામણાએ વ્રતરૂપ પૌષ્ઠ કર્યાના પૂરા હિમ યતીઓ છે, તેઓ ગિયાસણાએ અને પ્રિગયત્યાગ માત્ર કરી વ્રતરૂપ પૌષ્ઠ કરવાતુ કેમ નથી માનતા ? તેમ પૂજની ઢાળમા દેશથી આહારપૌષ્ઠ એકાસણા સુધીજ કેમ કહ્યું ? ગિયામણો અને પ્રિગયત્યાગ કરીને પણ દેશથી આહારપૌષ્ઠ થઈ શકે એમ કહેવામા નુ વાધો આવતો હતો ?

વસ્તુત શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયે અગ્યાગમા વ્રતરૂપ પૌષ્ઠમા નહી, પણ માત્ર આહારના ત્યાગરૂપ દેશથી આહારપૌષ્ઠમા એકાસણુ ગિયાસણુ, ને પ્રિગય ત્યાગ સુધા લેનાના છે જે એમ ન ન હોય તો શાસ્ત્રકારોએ તો ચાગે પ્રજાગ્ના પૌષ્ઠમા દેશથી ને સર્વથી એના જે બેદો ગણ્યા છે છતાં પૌષ્ઠ દડકમા માત્ર આહારપૌષ્ઠ માટેજ ‘દેમઞ્ચો સવ્વઞ્ચો વા’ અને બાકીના ત્રણે પૌષ્ઠ માટે એકજ ‘સવ્વઞ્ચો’ શબ્દ કેમ બોલાય છે ? એનુ કારણ એ કે—અમુક અગે ગરીબ સત્કાર, અધ્વજ્યર્થ અને ધર વ્યાપારના ત્યાગને શાસ્ત્રકારોના અભિપ્રાયે દેશથી તે તે પૌષ્ઠ કરી

શ્રાવકના ગુણવર્ણન પ્રસંગે તેમ ક્ષાણ્ગ મૂત્રમાં ૪ વિસામાના અધિકારે તથા હારિભદ્રીય આવશ્યકવૃત્તિમાં, તેમ શ્રાવકપ્રજ્ઞપિતૃત્તિમાં વિધિવાદથી કહ્યું છે કે—“ પૌષ્ઠોપવાસ અને અતિથિમંવિભાગ, આ બંને વ્રતો પ્રતિનિયત (અષ્ટમ્યાદિ પર્વ) દિવસોએ અનુદેય-કરવાનાં છે, પરંતુ પ્રતિદિવસ-નિત્ય આચરવા યોગ્ય નથી.”

* આવા અનેક શાસ્ત્ર પાઠોથી શ્રીહરિભદ્રસૂરિ જેવા મહાપુરુષોએ

શકાવા છતાં જેમ વ્રતરૂપ પૌષ્ઠમાં આહાર શિવાય આકીના ત્રણે પૌષ્ઠો સર્વથીજ કરાય છે તેમ આહાર પૌષ્ઠ દેશથી ત્રેવિહાર ઉપવાસે અને સર્વથી ચોવિહાર ઉપવાસેજ થવું યુક્તિયુક્ત કહેવાય, અન્યથા એનું નામ ‘પૌષ્ઠોપવાસ’ એ કાઠ પણ રીતે સાર્થક ન બની શકે, એટલે અગ્યારમા વ્રતરૂપ પૌષ્ઠમાં જન્મવું કે ગમે તેટલી વાર જન્મીને રાત્રે પૌષ્ઠ કરવું એ શાસ્ત્રોક્ત નહીં. પણ તપાઓની ગચ્છ રૂઢી-શાસ્ત્ર નિરપેક્ષ સ્વમતિ કલ્પનાએ ઘડી કાઢેલ ધરનો આચાર છે. રાગ દ્વેષના પ્રબલોદયે તેમ મતાગ્રહના તીવ્ર અભિનિવેશથી તપા ધર્મકીર્તિ તથા રત્નશેખરસૂરિ આદિ, અને મોટે ભાગે અનુમાનતઃ સાગરનાજ પૂર્વભવીય ધર્મસાગરે શાસ્ત્રોક્ત સુવિહિત સામાચારીઓમાં ઘણો ફેરફાર કરી નાખ્યો છે.

* રત્નશેખર સૂરિએ વંદિતુ સૂત્રની ટીકા અર્થદીપિકામાં પર્વશિવાયની દરેક તિથિએ પૌષ્ઠની સિદ્ધિ કરી બતાવવાને શ્રાવકની પાંચમી પડિમાને લગતો આવશ્યક વૃત્તાદિના નામે “ દિવેવ બ્રહ્મચારી, ન તુ રાત્રૌ ” આવે. તદ્દન નવોજ કલ્પિત પાઠ ઘડી કાઢતાં ભવભિરૂતાને તો સર્વથી આભરાઇએજ મૂકી દીધી છે, આ કલ્પિત પાઠનો અર્થ થાય છે કે— પાંચમી પડિમાધારી શ્રાવકે દિવસેજ

અષ્ટમ્યાદિ પર્વાદિવમે પોમહ લેવા પ્ર૩ધ્યા છે, ને તે શિનાય પ્રતિનિન-
 રંગેજ લેવા નિષેધ્યા છે ડ્યાણુઃ નિધિએના પૌષ્ઠ પધુપણા-
 ડપસૂત્ર મૂળના “ પારામોયં પોમહોવવામ પટ્ઠવિસુ ” આ પાઠથી
 અને “ અદ્વાહિયપજ્જુમણે ” આ ગાથાએ તત્ત્વાર્થવૃત્તિ તથા નવપદ-

બ્રહ્મચારી ગ્રહેવુ પણ ગત્રે ન ગ્રહેવુ ’ આવો દ્વિપત પાઠ તૈયાર
 ડી બનાવનામા ગ્લગેખગ્મુગ્નિના આગય આવશ્યકવૃત્ત્યાદિ પ્રમાણિક
 મર્માન્ય ત્રયોમા પૌષ્ઠના અગે દ્વિભ્રમુગ્નિ લેવા સમર્થ મહા-
 પુત્રોએ લખેલ “ પૌષ્ઠોપવાસાતિથિમવિભાગૌ તુ પ્રતિનિયતદિવસા-
 નુષ્ટેયૌ, ન પ્રતિદિવમા(નુષ્ટેયૌ)ચરણીયૌ ” આ પાઠની મમાનતા
 બતાવનાને છે પરંતુ મુજ વાચકોએ ધ્યાનમા ગખવુ કે આમશ્યકવૃત્તિ
 કે ખીન ગ્રહ પણ પ્રમાણિક મર્માન્ય ત્રયમા “ દિવૈવ બ્રહ્મચારી,
 ન તુ રાત્રી ” એવા પાઠનો નામ નિગાણુ મગ્ધુએ નથી, ત્યા
 (આમશ્યકવૃત્તિ પાના ૬૪૭ મા) તે પાઠ છે - દિવા વમચારી,
 રાત્રીપરિમાણકહે અપોસહિણ । પેમહિણ રત્તિમ્મિ ચ, નિયમેણ
 વમચારી ચ ॥ ૧ ॥ ’

અર્થાત-‘ પાચમી પડિમાને વહન ડગ્નાર ત્રાવકે પૌષ્ઠ રહિત
 હોય ત્યાગે દિવમે બ્રહ્મચારી, ને ગત્રે સ્ત્રીયોનો કે તેના ભોગોનો પ્રમાણ
 કડી ગ્રહેવુ, અને પૌષ્ઠ મહિત હોય ત્યાગે ગત્રે પણ બ્રહ્મચારી
 ગ્રહેવુ ’ આથી પાઠકોની જાણમા આવી ગયુ હશે કે-ઉપર લખેલ
 આવશ્યકવૃત્તિના મગ્નવિક પાઠની અદર ગ્લગેખગ્મુગ્નિના ડ્યા
 મુન્ય પાચમી પડિમાધારી ત્રાવકે ગત્રિએ બ્રહ્મચર્ય ન પાળવુ
 એવા અર્થનુ મૂચન મગ્ધુએ નથી અને આ ઉપગેક્ષ
 વાન્તવિક પાઠનો સમર્થન ‘ મેનપ્રશ્ન ’ કે જે જૈનેશને અને જેમ
 ગીના તેમ આગમપ્રત્ન આદિ બધાએ તપાએને મન પગમપુન્ય,

પ્રકરણવૃત્તિમાં (પયુષણ + તિથિના પોસહ) કહ્યા છે, તેમ સૂયગંગા
ટીકા ૧૮ માં અધ્યયનમાં “ પૂર્ણમાસીપુ ” આ પાઠથી શ્રીશીલાંકા-
ચાર્યે (પૂર્ણિમાના, આ રીતે) કહ્યાણુક (આદિ નિશ્ચિઓના)
પોસહ વિધિવાદથી કહ્યા છે.

તે પ્રમાણભૂત ગ્રંથ છે, તેમાં આચાર્ય વિજયસેન સૂરિણ પણુ કરે છે,
બુઓ—“ શ્રાદ્ધપ્રતિક્રમણસૂત્રસ્ય વૃત્તીત્ચ્યાદૌ તથા (?) આવશ્યક
વૃત્ત્યાદૌ ચ (?) શ્રાદ્ધપશ્ચમપ્રતિમાધિકારે ‘ દિવૈવ વ્રહ્મચારી, ન તુ
રાત્રા’વિત્યુક્તયા લિખિતમસ્તિ, પરમાવશ્યકવૃત્ત્યાદૌ તદ્વિલોક્ય-
માનં નોપલભ્યતે તત્કથમિતિ પ્રશ્નોડ્વોત્તરં—“ દિયા વમ્મચારી
રાઈપરિમાણકહે ” इत्यक्षराणि आवश्यकवृत्तौ सन्तीति ॥ ६२ ॥ ”
(સેન પ્રશ્ન પત્ર ૯) આ પાઠમાં આચાર્ય વિજયસેનસૂરિ આવશ્યક-
વૃત્તિમાં “ દિયા વમ્મચારી રાઈપરિમાણકહે ” એજ પાઠ હોવાનું
સ્પષ્ટ કથે છે, આટલા વિચાર વિનિમયથી ફલિનાર્થ એ થયું કે
સ્તનશેખર સૂરિએ યેન કેન (ગમે તેમ કરીને) અપર્વ પૌષધની
સ્વમાન્યતાને અંધશ્રદ્ધાણુ ભદ્ર જનતા સમક્ષ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધ
કરવાનેજ “ દિવૈવ વ્રહ્મચારી, ન તુ રાત્રી ” આ કલ્પિત નવો પાઠ
આવશ્યકવૃત્તિના નામે ઘડી કાઢેલ છે.

+ તપા ખં ૦ ભેદ પૃં ૫૦ તથા ૧૪૪ માં લખેલ બોલ નં. ૫૭
અને ૫૯ નો ઉત્તર આ ગ્રંથકારે પ્રશ્નોત્તર ૫૬ માં યદ્યપિ સ્વતંત્ર
આપેલ છે. છતાં પ્રસંગવશ આ શાસ્ત્રપ્રમાણોથી તે આશયનેજ સ્પષ્ટ
કરતાં એ બતાવવામાં આવે છે કે ખરતરગચ્છવાળાઓ કહ્યાણુક
અને પબુસણની તિથિએ પણ પૌષધ તપાઓની માફક મતિ કલ્પનાએ
નહીં, પણ શાસ્ત્રસંમતજ કરે છે.

उपानना पोसह श्रावण श्राविकाओ पासे नित्य पर्ववग्न ने
 गवीओ छीओ ते (अधाओ गच्छेना) गीतार्थोओ पोतपोताना
 सामाचारी अथोमा x उपवानना पोसह लभ्या छे, अटले (ते)
 आयरणा पोसह कहेवाय, तथा ग्लशेभ्रमृगिकृत आचारप्रदीपमा
 ऽहु छे इ-“नेणे नवकारभंत्र आदि सूत्रो कएणी लीधा होय तेणे
 पशु सयोग मत्थे इध नतनो विलय कर्या (टाधम गभाव्या) वग्न
 यथाशक्ति तपस्या पूर्वक पौषधादि विधिओ उपवान अवश्य वहन
 करवा” अतावता आगममा वलुवेव (प्रतउप) पोसह पर्वदिवसेन
 करवा, पशु अपर्दिवसे न करवा, ऋषिमति तपाना गुइ देवेन्द्रसूरि
 धर्मग्ल प्रकणुनी टीजामा लभे छे इ-“हवे पौषधउप त्रीलु
 शिक्षाप्रन कहेवाय छे, तेमा ने धर्मनी पुष्टि इरे ते पौषध, अटले
 अष्टमी यतुर्दशी पूनम अभास आदि पर्वदिवसे ऽवा योग्य
 प्रतविरोप (ने पौषध कहे छे) अनीन रीते श्रावणदिनकृत्यमा

x यद्यपि श्रीमहानिशीथादौ उपधाने सदा पौषधग्रहण
 नोक्त तथापि सर्वगच्छीयगीतार्थाचरणया उपधाने पौषधग्रहण
 प्रमाणीकृतमस्तीति दृश्यते ।” (योगविधि प्रकणु पूर्वाचार्यकृत)

“पौषधग्रहणक्रिया तु यद्यपि महानिशीथे साक्षान्नोक्ता तथापि
 यथा साधोर्योगेष्वतिशायिक्रियावत्त्व सर्वप्रतीत तथा श्राद्धाना-
 मप्युपधानेषु विलोक्यते ।” (आचार प्रदीप पत्र १६)

मतलप अन्ने पाहोनो आ छे इ-उपवानमा सदा पौषध लेवु
 यद्यपि महानिशीथमा साक्षात् ऽहु नथी, छता साधुओने योगोद्धनमा
 नेम विशिष्ट क्रिया होय छे तेम श्रावणने पशु उपवानमा होवी
 नेधओ, अटले अधा गच्छेना गीतार्थोनी आयरणाओ उपवानमा
 पौषध लेवानु प्रमाणु ऽहु छे



લખેલ “ છ્ઠ્ઠું તિહીણ ” આ ગાથાથી એ આરંભ એ ચૌદસ, ને એકેક પૂનમ. અમાસ, આ છ પર્વતિથિઓ તથા તીર્થંદર ભગવંતોની કલ્યાણક તિથિઓ. આ બંધી તિથિઓ પોસહ વ્રત લેવાની કહી છે. વૃત્તિમાં પણ એજ વ્યાખ્યા કરી છે. એથી પોસહ વ્રત લેવાની એ આગમોક્ત તિથિઓ કરનાં અધિક તિથિઓ પોસહ લેવાની (જે) માને છે તે આગમ તથા આચરણાથી વિરુદ્ધ જાણવો, રાગદ્રેષને વશ થયેલા કહે તે પ્રમાણ ન થાય, એટલે આગમોક્ત રીતિએ પોસહ વ્રત પર્વતિથિએજ લેવો. પર્વશિવાય ન લેવો, + આ બાબતમાં શાસ્ત્રના નામ પાઠ (વિગેરે) વિશેષ જાણવાની ઇચ્છાવાળાએ ‘પૌષધપદ્મત્રિંશિકા’ સદીક જોઈ લેવી (તેમ અનુવાદકના ગુરુદેવ પંન્યાસપ્રવર શ્રીકેશર મુનિજી ગણિવર લિખિત હિંદી ‘ પ્રશ્નોત્તર વિચાર ’ જોવા ભલામણ છે.)

(તપા ખરતર ભેદ ગ્રંથ ૧-૨, બોલ ૨ જો)

૨ પ્રશ્ન—તથા સ્વરતર આંબિલ નીવી એકાસણઈ પોસહ ન કરઈ, તે સ્યું ?

ભાષા—ખરતર આંબિલ નીવી. એકાસણાએ પોસહ ન કરે, તે શું ?

તત્રાર્થે સ્વરતરાંને પુણિ આચરણાના પોસહ જે છઈ તેહમાંહિ આંબિલ નીવી એકાસણા કરઈજિ છઈ, જઈ પોસહમાંહિ જિમિવડ ન હવઈ તઓ કિમ જીમાઈ ?, તથા શાસ્ત્રે દેશત

+ અરે અપર્વદિવસે પૌષધના હિમાયતિઓ ! ખરતર ગચ્છવાળાઓ તો અપર્વના પૌષધનો નિષેધ કરે છે. છતાં, છે તે ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે શાસ્ત્રાનુસાર, પરંતુ તમે પોતાના પગતજે બળતીને કાંઈ જુઓ છો ? લૌકિક પંચાંગ કે જેના આધારે આજે આખો જૈન સમાજ તિથિ આદિનો વ્યવહાર માની રહ્યો છે. તેમાં તે જ્યોતિષના

आहार पोसहमाहि व्यासणा पुणि कहाँ छड तद्यथा—“ आहार पोसहो दुविहो—देसे य सव्वे य, देसे अमुगा विगती आय विल वा एकसिं वा दो वा ” इत्यादि श्रीआवश्यक बृहद्बृत्ती (पत्र८३६)। ‘एकभक्त द्विभक्त वा करोती’ति टिप्पनके × (पत्र११६) पर तपानइ व्यासणाना पोसहनी आचरणा नथी, एव खरतरानड

भक्षितानुमार थती तिथिनी वृद्धि प्रमगे सूर्योदयथी स पूर्युं अहो— रात्रिना भोगवद्यावाली माइ घडीनी आइम डे सौदम पर्वतिथिने रामपथिओ इत्यु इहीने तेम सागपथिओ पोतानी उपोस उपनाओ आतम डे तेस अनावीने स पूर्युं अहोगत्रि ६० वडीनी आइम डे सौदस पर्वतिथिओ पशु पौषधादि धर्मदयेनि निषेध छडेयोइ इरी रखा छे अष्टकुल नही पशु ते ते पहेली पर्व— तिथिओने इत्यु डे अपर्वतिथि मानीने इहीने अर्थापत्तीओ गृह्यओने वनस्पतिना छेदन भेदनो तेम अश्रम भेवनो उपदेश दध रखा छे आ ते कथ जतनो तमारो धर्मोपदेश ?

जे इहो डे पर्वतिथिओ भडिनानी आग्न गात्रजरोओ इही छे ते तेर डेम कसय ? तो तमने प्रम कवानु डे अपर्व तिथिओ १८ ने अदले १६ कवानु इमान ज्या जेन शास्त्रजगेओ तमने आप्यु छे ? लीनवणीना छेदन भेदन अने अश्रमभेवन भाटे अपर्व तिथिनी वृद्धि थाय तो लने थाय परतु ते आवद्यव्यापाग्ना त्यागउप धर्म—आधन भाटे ओके तिथिनी वृद्धि न थया देवी आवु कथन ज्या जैन सिद्धातनु छे ? महाशयछ । पहेवा पोतानु धर तपामी पत्री भीजने कथ पशु इहेवु उचिन उहेवाय

× आ ओ पाठाना निवेदन भाटे प्रश्नो० १ नी पहेली उटनोट लुओ

પણ જિયઈ તીયઈ પોસહમાંહિ જિમતા નથી. પોસહવિશેષઈ જિમિવડ સદહીયઈ છઈ, શ્રીજિનવલ્લભ સૂરિજીયઈ પુણિ વિહું પોસહનઈ (?) સાધારણઈ પોસહમાંહિ જિમિવાની વિધિ કહી છઈ, પુણિ આગમોક્ત પોસહનડ નામ નથી કહ્યડ ।

ભાષા:-ખરતરોને પણ (ઉપધાન આદિ) આચરણના જે પોસહ છે, તેમાં આંખિલ નીવી. એકાસણા કરેજ છે, યદિ પોસહમાં જમવાનું ન હોય તો કેમ જમાય ? અને શાસ્ત્રોમાં દેશત આહાર પોસહમાં ખિયાસણું પણ કહ્યું છે, તે આવી રીતે-“ આહાર પોસહ જે પ્રકારનો-દેશથી અને સર્વથી, દેશથી અમુક વિગયં અથવા આંખિલનો આહાર એકવાર યા બે વાર (ખાય) ” ઇત્યાદિ આવશ્યક વૃહદ્વૃત્તિમાં, તથા ‘ એક ભક્ત (એકાસણું) અથવા બે ભક્ત (ખિયાસણું) કરે ” આ રીતે આવશ્યક ટિપ્પનમાં કહેલ છતાં તપાને ખિયાસણાના પોસહની આચરણા (જેમ) નથી, તેમ ખરતરોને જે તે પોસહમાં નથી જમતા પણ પોસહવિશેષ(ઉપધાનાદિ)માં [જમવું] માનીએ છીએ. શ્રીજિનવલ્લભસૂરિછએ + પણ બન્ને પોસહને (?) સાધારણ પોસહમાં જમવાની વિધિ કહી છે પણ આગમોક્ત (અગ્યા-રમા વ્રત૩૫) પોસહનું નામ નથી કહ્યું.

+ તપા ખ. ભેદ પૃ. ૨ માં જંખ્યાચાર્ય લખે છે કે-“ શ્રીજિન-વલ્લભસૂરિ (કૃત) ‘ પૌષધ વિધિ પ્રકરણમાં ઉપધાન વિના પોસહમાં જમવું કહ્યું (છે), ઉપધાનનું કાંઈ કહ્યું નથી ” આના ઉત્તરમાં જણાવાનું કે જે ઉપધાન વિના પોસહમાં જમવાનું કહ્યું છે તો તેનો તે પાઠ કેમ ન મૂક્યો ? અને ‘ઉપધાનનું કાંઈ કહ્યું નથી, છતાં દરેક પોસહમાં

(तथा अन्तर् जेद अथ १-२, जोल ३ जे)

३ प्रश्न-तथा खरतर गच्छि श्रावक श्राविना वि पहर पछीइ जिमीने पत्रदिनड रातिनड पोमह न करइ, ते स्यु ? ।

जन्मानु भानी लेवाभा अमताअह सिनाय मिलु कोध जन्नु न होध राडे रणी ओर पु० २ भा निनव'वल सुगि'ना नाम फ टि'पणु लभना ज'प्यायार्थ 'मेनअन्न' ना ते अन्नोत्तमे 'धरो सुय' भानी छीने उध्वृत डरे छे डे लेनी अह " पि'पिगुदिना इर्ता निनव'वल गलिनु अन्तर् गच्छीयपाडु मलवतु नथी " ओवो इमान आयाथ पि'प्यमेनसुगि जहेउ डरे छे ओ आभनभा तेभणे लगावेद जे हेतुओ प'त्री पहेवो हेतु आ छे डे- " तेभणे (निनव'वल गलिओ) डरेज ' पौषधविधि प्र'णु' भा ' उपवाम इ'नानी नदिना अभावे श्राव'ने [पौषधभा] जन्मा-ओडामपु विगेरे इ'नानु डहेल छे " आ उप'ना अमता'लभा लापात'जन्नु जे लभनु डे " उपवाम इ'नानी नदिना अभावे " ओ डेवण पोतानी भति इ'पना छे ' मेनअन्न ' भूगभा ओरी वान' नथी त्या तो पाइ छे " तत्कृते पौषधविधिप्रकरणे श्राव'ना पौषधमध्ये जेमनाचरवर्जनात् " अर्थात् " तेभणे डरेज ' पौषधविधि प्र'णु' भा श्राव'ने पौषधभा जन्मानु डहेल छे "

आथी जन्मानु डे ओ' तो ' मेन अन्न ' भूगभा " उपवाम इ'नानी नदिना अभावे ' ओभ आयाथ पि'प्यमेनसुगि लभना नथी प'ना लापात'जन्नु पोतानी इ'पोन'पिन भान्य'नाने पुष्ट इ'ना इवे

ભાષા—ખરતર ગચ્છમાં શ્રાવક શ્રાવિકાઓ જે પહર પછી જમીને પર્વદિને રાતનું પોસહ ન કરે, તે શું ?

તેમ મતઘડંત ભાષાંતર કરેલ છે અને આગમપ્રજ્ઞ જન્વાચાર્ય પણ સ્વમાન્યતાની સિદ્ધિ બતાવવા ‘સેનપ્રશ્ન’ મૂળને જોયા—તપાસ્યા વગર આંખો મીચીને માત્ર ભાષાંતરનો અવતરણ લખીને ખુશ થઇ ગયા. પરંતુ આચાર્ય વિજયસેનસૂરિનું કથન “ઉપવાસ કરવાની શક્તિના અભાવે પૌષ્ઠમાં જન્મવાનું ‘પૌષ્ઠવિધિ પ્રકરણ’ માં કહ્યું છે” એવું જરાએ નથી. તેમનું કથન તો એટલુંજ કે “પૌષ્ઠ વિધિ પ્રકરણમાં શ્રાવકોને જન્મવાનું લખ્યું છે.” હવે ‘પૌષ્ઠવિધિ પ્રકરણ’ માં એ બાબત કેમ છે? તે તપાસીએ, ત્યાં તો “જઈ પારણાઈત્તો” એવું ચોક્કસ પાઠ છે, એનો મતલબ છે કે “જે પારણાવાલો હોય તો પચ્ચક્રખાણુ પારે ને ભોજન કરે” આવેજ પાઠ પૌષ્ઠમાં જન્મવા બાબતનો તમારા તપાસીને માન્ય આચારવિધિ નામનું સામાચારી પ્રકરણ કે જે સુરતના ઝવેરી મંછુભાઈ જીવણચંદ તરફથી સાગરાનંદે પ્રકાશિત કરાવેલ છે, તેના પાના ૧૨ માં તેમ સુબોધા સામાચારી, કે જે ૬૦ લાલ ભાષ પુ૦ કુંડ તરફથી પ્રકાશિત થયેલ છે, તેના પણ પત્ર ૩૬ માં છે જુઓ “જઈ પારણાઈત્તો તો પચ્ચક્રખાણુ પુણ્યો સ્વમાસમણપુવ્વં પુત્તિ પેહિય૦” ઇત્યાદિ, આ બધા પાઠોમાં પારણાવાલાને પૌષ્ઠમાં ભોજન કરવાનું વિધાન છે. હવે વિચારવાનું એ છે કે પારણાવાલો કાણુ કહેવાય? શું રોજના રોજ ગમે તેટલી વાર જન્મતો હોય, ને પૌષ્ઠના દિવસે જે આંખિલ કે એકાસણું કરે તેને પારણાવાલો કહેવાય? ના ના, આગમપ્રજ્ઞ મહારાજ! તેને પારણાવાલો કદાપિ ન કહી